शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 दिसम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सुरेन्द्र वर्मा के कथा साहित्य में आर्थिक चित्रण

मिलिन्द कुमार गौतम (शोधार्थी)
तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अधययनशाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर

शोध संक्षेप

सुरेन्द्र वर्मा आधुनिक हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ साहित्यकारों में से एक हैं। बहुमुखी प्रतिभाके धनी वर्मा जी ने अपनी अद्भुत रचनाशीलता के कारण ही हिन्दी साहित्य की लगभग सभी विधाओं को अपनी लेखनी का पावन स्पर्श प्रदान किया। अपनी रचनाओं में वर्मा जी ने नये प्रयोग कर एंव आजादी के बाद होने वाले सामाजिक परिवर्तनों को अपने साहित्य में केन्द्र बनाकर साहित्य को समृद्ध किया। सुरेन्द्र वर्मा के कथा साहित्य में मध्यमवर्गीय परिवार की आर्थिक स्थिति से उत्पन्न घुटन, टकराहट, मूल्य संकट एवं समकालीन संवेदनाओं को बड़ी खूबसूरती से प्रस्तुत किया गया है।

भूमिका

साहित्य में अर्थ को आँकड़ो में प्रस्तुत नहीं किया जाता। साहित्यकार मूलतः सामाजिक प्राणी है। वह समाज में ही रहते हुए महसूस करता है कि अर्थ का प्रभाव आम व्यक्ति पर कहाँ और कितना है। अर्थ के कारण सामाजिक सम्बन्धों में कितना और कैसा बदलाव आया है।

"आधुनिक समाज व्यवस्था अर्थ केन्द्रित है। इसी कारण अर्थ ने मानव की चेतना कुंठित कर दी है। अर्थ केन्द्रित दृष्टि से व्यक्ति सम्वेदन शून्य बन गया है। अर्थ ने सारी नैतिकता और मर्यादा नष्ट कर दी है। पैसे में अमोघ शक्ति है, अर्थ युग की इस आपाधापी में सभी मानवीय रिश्ते अर्थ की दौड़ से जुड़ गए हैं।"[1]

सुरेन्द्र वर्मा के कथा साहित्य में आर्थिक चित्रण

सुरेन्द्र वर्मा के 'अंधेरे से परे' उपन्यास में मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक स्थिति की जीवन गाथा का चित्रण है। आत्मकथात्मक शैली में लिखे इस उपन्यास का पात्र गुलशन टाईपराइटर की नौकरी करता है उसे महीने के 150 रुपये महज मिलते हैं, जिसमें से सौ रूपये वह माँ को देता है। माँ कहती है - "कुछ बढ़ाने को नहीं कहते दत्ता से ? महंगाई कितना बढ़ गई है।"[2]

किन्तु गुलशन का कहना है कि उसे डैडी का ख्याल करके ही नौकरी पर रखा गया है वरना दत्ता का जूनियर खुद टाईपिंग जानता है।

उपन्यास में सुरेन्द्र वर्मा का उद्देश्य महज मध्यवर्ग की आर्थिक विवशता का चित्रण करना ही नहीं है बल्कि उसके द्वारा आर्थिक अभावों से उत्पन्न कठिनाइयों का चित्रण करना भी है।

सुरेन्द्र वर्मा के 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास में एक अभिनेत्री की संघर्ष गाथा का चित्रण है। किन्तु आर्थिक अभाव से जूझ रहे अभिनेत्री वर्षा के मध्यवर्गीय परिवार का भी यथार्थ अंकन किया है।

प्रायमरी स्कूल के अध्यापक किसनदास शर्मा के निवास का चित्रण ही उनकी आर्थिक हालात बयां करता है। शहर के पुराने, निम्न मध्यमवर्गीय इलाके में संकरी उबड़-खाबड़ गालियों और खुली बदबूदार नालियों के बीच उनका पन्द्रह रूपये महीना किराए का आधा कच्चा, आधा पक्का

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

मकान से ही इस परिवार की आर्थिक स्थिति को समझा जा सकता है। शर्मा जी का परिवार बढ़ा है। बड़े परिवार की बढ़ती जरूरतें चिंता का विषय है। बच्चों के स्कूल की फीस भरने तक में दिक्कतें आती है। जैसे "नया सत्र शुरू होने पर वर्षा वशिष्ट ने जुलाई में ही फीस दी थी। अब बिना फीस का दूसरा महीना शुरू हो चुका था। वह पुराने अनुभवों से जानती थी कि जैसेजैसे समय बीतता जाएगा, एकमुश्त फीस चुकाने की संभावना और कम हो जाएगी।"[3]

किसनदास शर्मा का बड़ा बेटा महादेव जो रोड़वेज में क्लर्क था घर की कुछ मदद अवश्य करता है, किन्तु उसका भी अपना खर्च है, जरूरते हैं। परिवार की जरूरतें बढ़ती जा रही हैं। बड़ी बेटी गायत्री का विवाह हो जाने के बाद जब वह गर्भवती हो जाती है तो परिवार का खर्च और भी बढ़ गया।

वर्षा परिवार की आर्थिक हालात समझती है - "वर्षा जानती थी, जिज्जी के ब्याह का कर्जा चुकाने में पिता को बहुत समय लगेगा। उनकी खाँसी बढ़ गयी है, पर वह डाक्टर के पास नहीं जा रहे थे, जैसे बीस पच्चीस रूपये बचाकर सब कुछ संवार लेंगें।"[4]

महादेव घर की हालात जानता था, इसलिए पीलीभीत में किराए के एक कमरे में भाई-बहनों के बेहतर भविष्य के लिए पेट काट-काटकर गुजारा कर रहे हैं, और स्वयं अपने भावी जीवन की रूपरेखा को स्थगित करते जाते हैं। उन्होंने बहन वर्षा के सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखा तो वर्षा ने विवाह करने से साफ इन्कार कर दिया। महादेव ने घर की आर्थिक स्थिति को बयां करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा - "सिर्फ बी.ए. की डिग्री के सहारे कब अपने पावों पर खड़ी हो जाओगी ? इसके बाद तुम्हारी पढ़ाई की जिम्मेदारी निभाना घर के लिए संभव नहीं होगा।"[5]

चिंतित पिता, बेटी का जल्द विवाह करना चाहते हैं। यथा - "पिता अपनी सामाजिक एवं आर्थिक हैसियत के अनुरूप, दो बच्चों के पिता एक विधुर से उसके विवाह का प्रस्ताव उसके आगे रखते हैं।" किन्तु वर्षा की सोच एवं महत्वाकांक्षा कुछ अलग है। वह अपने निर्णय पर दृढ़ रहती है। परिवार के आर्थिक हालात को जानते हुए वह पढ़ाई के साथ ट्यूशन भी लेती है।

आर्थिक अभाव में मध्यमवर्गीय परिवार को अपनी इच्छा-आकांक्षाओं का गला घोंटना पड़ता है। इस कारण परिवार को कई बार संघर्षपूर्ण स्थितियों का सामना करना पड़ता है।"[6]

'दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता' मध्यमवर्गीय परिवार के नील एवं भोला की दर्द भरी दास्ताँ है। प्रो. डॉ. शर्मा का प्रिय छात्र नील एम.ए. के पश्चात् दिल्ली विश्वविद्यालय में ही अस्थाई तौर पर अध्यापन का कार्य कर रहा था। किन्तु प्रो. डॉ. शर्मा की भतीजी किरण के साथ उसके शारीरिक संबंध स्थापित हुए और वह गर्भवती हो गई। उसने गलती की क्षमा याचना भी की। किरण से विवाह का भी प्रस्ताव रखा, किन्तु डॉ. शर्मा ने नील के गरीब होने से नील पर क्रोध करता है और नील का जीवन तबाह करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। वह छः महीने के अन्दर ही जिंदा लाश हो गया। पहले से ही नील की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। अध्यापक की भी नौकरी चली गई। यथा - "सुबह नौ से रात नौ तक साबुन टूथपेस्ट और क्रीम की बिक्री करता। सस्ते ढ़ाबे में दो रोटियाँ निगलता। सड़क किनारे के चाय वाले गिलास लेता। पचास पैसे और एक रूपया बचाने के निरंतर तनाव से भीतर आक्रोश भरी लिजलिजाहत उसके जीवन में भर गई थी।"[7]

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उपन्यास के दूसरे पात्र भोला का जीवन भी कुछ ऐसा ही था। मथुरा से पचपन किलोमीटर दूर गाँव में थोड़ी सी जमीन थी पिता के देहांत के बाद भोला के काका (चाचा) अकेले खेती-बाड़ी संभालते थे। भोला मथुरा की हेयर आयल फैक्टरी में चौकीदारी करता था। वह हर बार की तरह इस बार भी फसल की कटाई के बाद हिस्सा लेने गया तो काका ने उसे घर में ही न घुसने दिया। बहुत सिर हाथ पटकने के बाद कुछ हसिल नहीं हुआ। वहीं भोला के ऊपर बहन की शादी का जिम्मा था। यथा "दो-तीन साल में उसे बहन का ब्याह कर देना है। 'चंदा', दर्जा आठ तक पढ़ी है, वह और माई (माँ) फैक्टरी में पैकिंग का काम करती हैं और फैक्टरी के क्वार्टर में ही रहती है।"[8]

आर्थिक अभाव एवं पारिवारिक चिंता ही नील और भोला को समृद्धि एवं अवसर के महानगर बंबई ले आती है। मुम्बई में उन्हें क्या-क्या यातनाएँ गरीबी की बजय से झेलनी पड़ती हैं। वर्मा जी ने नील एवं भोला के माध्यम से मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक विवशता एवं अभाव का वास्तिविक चित्रण किया है।

सुरेन्द्र वर्मा की 'काऊंटर' कहानी में होटल के काऊंटर पर कार्यरत मैनेजर तथा होटल में काम करने वाले वेटरों की जिंदगी पर प्रकाश डालने का अत्यंत सफल प्रयास हुआ है। होटल में कार्यरत कम उम्र के 'नन्हें' नामक वेटर की माँ बेटे की तनख्वाह लेने होटल पहुँचती है। परिवार की आर्थिक विवशता बालकों को काम करने पर मजबूर करती है। लेखक ने बाल मजदूरों की समस्या को भी अभिव्यक्त दी है। होटल के काऊंटर पर कार्यरत मैनेजर की भी आर्थिक स्थिति कुछ अलग नहीं है। मैनेजर कई दिनों से सोच रहा है कि होटल के मालिक से तनख्वाह बढ़ाने को कहे। उसने सोचा है कि मालिक से जाकर कहूँगा - "सर, जिस तनख्वाह पर आठ साल पहले यहाँ ज्वायन (नौकरी ली थी) किया था, अब उसमें काम चलाना बहुत मुश्किल हो गया है। अगर इनक्रीमेन्ट मिल सके, तो बड़ी मेहरबानी होगी।"[9]

'पुष्प शैय्या' कहानी में परिवार की आर्थिक विवशता का चित्रण हुआ है। किन्तु यह परिवार पहले से ही आर्थिक अभाव में नहीं था। निवेदिका के पिता पर आफिस में भ्रष्टाचार का आरोप लगते ही परिवार आर्थिक अभावों से जूझने लगता है। परिवार में अचानक आया बदलाव निवेदिका की समझ से बाहर था, क्योंकि तब उसकी उम्र कम थी। वह पूछना चाहती थी कि - "हमने अपना पुराना घर क्यों छोड़ दिया ? वहाँ का सारा सामान कहाँ गया ? अब वह उसी तरह क्यों नहीं रहते ? वैसा ही खाना क्यों नहीं खाते ? हमारी कार कहाँ है, खानसामा, नौकर और शोफर कहाँ गए ? माँ ऐसी पुरानी साड़ी क्यों पहनी है ? खुद काम क्यों करती हैं "?[10] किन्तु वह पूछ नहीं पाती थी। केवल माँ की और टुकुर-टुकर देखती रहती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखतें हैं कि स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में आर्थिक स्थिति ने मानव समाज को बहुत गहराई तक प्रभावित किया है आज का युग जीवन में अस्तित्व के लिए छीना झपटी और फपट व्यवहार का दर्पण है। स्वातन्त्र्योत्तर काल में आर्थिक शोषण का दायरा और व्यापक हो गया है। हमारी स्वतन्त्रता कई नयी संभावनाएँ लेकर आयी। नए-नए आविष्कारों के साथ मनुष्य की आवश्यकताएँ भी बढ़ती गई। जीवन में कृत्रिमता एवं बनावटीपन आने लगा फलस्वरूप

बेईमानी बढ़ती गई। सुरेन्द्र वर्मा ने अपने कथा साहित्य में इस चिरंतन आर्थिक समस्या का चित्रण बहुत ही बेहतरीन ढंग से किया है। आर्थिक समस्या से वर्मा जी के साहित्य में सब से ज्यादा युवा वर्ग ही प्रभावित होते हुए दिखई देता है। जिस से वह आज कुण्ठाग्रस्त हो चुका है। वह रात दिन मेहनत करके डिग्रियाँ प्राप्त करता है। आखिर उसकी झोली में क्या पड़ता है निराशा, हताशा, उसके पास न पैसा न सिफारिश, परिणाम यह होता है कि समाज में विद्रोह, कुण्ठा, आत्महत्या, की स्थितियाँ दिखाई देती हैं। मेहनत करने वाला मजदूर अपने परिवार के लिए एक जून की रोटी प्राप्त नहीं कर पाता है। जिससे गलत रास्ता पकड़ अपनी जिंदगी समस्याभरी बना लेता है। दो मुर्दो के लिए गुलदस्ता की यह कहानी है।

'अंधेरे से परे' उपन्यास का गुलशन तथा उसका परिवार 'मुझे चाँद चाहिए' के किशनदास शर्मा का परिवार काउंटर कहानी के वेटर और मेनेजर या फिर, पुष्प शय्या की निवेदिका सभी को आर्थिक अभाव कचोटता है। सुरेन्द्र वर्मा ने अपने व्यापक कथा साहित्य से आर्थिक अभाव में जीवनयापन कर रहे समाज के मानव की इच्छा, आकांक्षाओं का गला घोटना आदि ज्वलंत समस्याओं को अपनी लेखनी से उजागर किया है।"[11]

संदर्भ ग्रन्थ

1 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों में शोषण के विभिन्न रूप, डॉ. सुरेश नामदेव तायड़े पृष्ठ 35

2 अंधेरे से परे - सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ 30

3 मुझे चाँद चाहिए - सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ 18

4 मुझे चाँद चाहिए - सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ - 18

5 वही, पृष्ठ 48

6 हिन्दी उपन्यास: सार्थक की पहचान, मधुरेश, पृष्ठ 325

7 दो मुर्दो के लिए गुलदस्ता, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ 12

8 वही, पृष्ठ 15

9 प्यार की बातें तथा अन्य कहानियाँ, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ 76

10 वही, पृष्ठ 88

11 सुरेन्द्र वर्मा व्यक्ति और अभिव्यक्ति, डॉ. जिजाबराव पाटील, पृष्ठ 52